शंकर का आत्मा-संबंधी विचार (Conception of Soul)

वेदान्त दर्शन में आत्म-तत्व विचार अत्यन्त महत्वपूर्ण सत्ता है। उपनिषदों में आत्म विद्या को मूल विद्या बताया गया है जो कि महत्वपूर्ण है, क्योंकि यही मनुष्य को मोक्ष (समस्त दुःखों से मुक्ति) प्राप्त कराती है। इसीलिए मैत्रेयी उपनिषद् कहती है कि - "आत्मा ही वह तत्व है, जिसका दर्शन करना चाहिए, श्रवण करना चाहिए, मनन करना चाहिए"। वस्तुतः आत्मज्ञान ही सर्वोच्च ज्ञान है जिसे समस्त भारतीय दर्शनों ने महत्व दिया है।

शंकराचार्य ने भी अपने दर्शन में आत्मज्ञान को सर्वोच्च स्थान दिया है। वे कहते हैं, - 'आत्मज्ञान प्राप्त करने से महान और कोई सफलता नहीं है'। उनके अनुसार 'आत्मा' जिसको हम सब 'अहम्' (मैं) के रूप में अनुभव करते हैं, और कुछ नहीं, पर-ब्रह्म परमात्मा ही है। आत्मा का यहाँ पर स्वतंत्र चिंतन किया गया है, क्योंकि हम साधारणतः अपनी आत्मा को ब्रह्म से पृथक सत्ता मान लेते हैं। वास्तव में, ब्रह्म और आत्मा दोनों एक ही हैं। वे आत्मा को स्वयंसिद्ध मानते हैं। इसे सिद्ध करने के लिए तर्क की आवश्यकता नहीं पड़ती।

शंकर ने आत्मा और ब्रह्म दोनों को एक ही बताया गया है। अज्ञान के कारण व्यक्ति इन दोनों में अंतर पाता है। जिस प्रकार अज्ञानी विश्व को वास्तविक सत्ता मान लेता है, उसी प्रकार तत्वज्ञान के अभाव में व्यक्ति आत्मा को ब्रह्म से भिन्न मान लेता है। तत्वज्ञानी आत्मा और ब्रह्म में कोई भिन्नता नहीं पाते। 'तत् त्वमसि', 'अहं ब्रह्मास्मि' आदि कथन इन दोनों की एकता का संदेश देते हैं।

साधारणतः व्यक्ति अज्ञान के वशीभूत होकर आत्मा को शरीर या इंद्रिय समझने की भूल कर बैठता है। वह अक्सर

कहा करता है - "मैं मोटा हूँ, मैं दुबला हूँ इत्यादि। ये कथन आत्मा को शरीर बताते हैं। उसी प्रकार उसके ये कथन कि 'मैं अंधा हूँ', 'मैं बहरा हूँ' आत्मा को 'ज्ञानेंद्रिय मान लेते हैं। जब वह कहता है कि 'मैं लंगड़ा हूँ' तब यहाँ 'मैं' अर्थात् आत्मा को कर्मेन्द्रिय के रूप में स्वीकार किया जाता है। परन्तु ये सभी कथन अज्ञानियों के लिए हैं। ज्ञानी व्यक्ति कभी आत्मा को शरीर, ज्ञानेंद्रिय या कर्मेन्द्रिय समझने की भूल नहीं कर सकता। व्यावहारिक दृष्टिकोण से केवल इतना ही कहा जा सकता है कि आत्मा शरीर-युक्त है और इस शरीर में इंद्रियां रहती हैं।

शंकर सांख्य की भाँति दो प्रकार का शरीर मानते हैं - (1)- स्थूल शरीर → यह मृत्यु के साथ ही नष्ट हो जाता है; (2) सूक्ष्म शरीर → इसमें शरीर मृत्यु के बाद भी आत्मा के साथ कायम रहता है। स्थूल शरीर के अंदर सूक्ष्म शरीर रहता है, जो अंतःकरण, प्राण एवं इन्द्रियों का समूह है। इस प्रकार मृत्यु स्थूल शरीर को समाप्त कर देती है, न कि सूक्ष्म शरीर को।

ब्रह्म 'सच्चिदानंद' है, इसलिए आत्मा भी सच्चिदानन्द है। 'सच्चिदानन्द' तीन शब्दों से मिलकर बना है - सत्+चित्+आनंद। ब्रह्म सत्ता, चेतना एवं आनन्द से युक्त है। सच्चिदानंद के स्वरूप में साधारण जीवन में भी आत्मा की झांकी देखने को मिलती है। हमारा दैनिक जीवन इन तीन प्रकार की अनुभूतियाँ प्रस्तुत करता है - जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्तावस्था। इन तीनों अवस्थाओं में चैतन्य विद्यमान रहता है। गहरी नींद के बाद उठकर व्यक्ति जब कहता है कि 'उसने गहरी नींद ली' तब इससे स्पष्ट पता चलता है कि नींद में भी उसकी चेतना उसके साथ थी। इसीलिए शंकर 'चैतन्य' को आत्मा का स्वभाव मानते हैं। आत्मा में चैतन्य के साथ-साथ

सत् एवं आनन्द भी पाये जाते हैं। इसी कारण इसे - 'सच्चिदानन्द' कहा गया है। शंकर के अनुसार इसकी पूर्ण एवं स्पष्ट झाँकी सुषुप्तावस्था में मिल सकती है। जाग्रतावस्था एवं स्वप्नावस्था में भी इसकी अस्पष्ट एवं क्षीण झाँकी मिलती है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि आत्मा नित्य चैतन्य है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि आत्मा नित्य, चैतन्य, सत्-चित् एवं आनन्द स्वरूप है। आत्मा परब्रह्म के समान आनन्द स्वरूप है। आत्मा और ब्रह्म एक ही सत्ता का समर्थन करती है; जैसे कि - 'अहम् ब्रह्मास्मि' (मैं ब्रह्म हूँ), 'अयमात्मा ब्रह्म' (यह आत्मा ब्रह्म है), 'तत्वमसि' (वह ब्रह्म तू (आत्मा) ही है)। ये सभी वाक्य उपनिषदों में वर्णित महावाक्य की एकता के प्रतिपादक हैं। आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप है। आत्म-बोध के संदर्भ में शंकर कहते हैं कि - "जिस प्रकार सूर्य का स्वभाव प्रकाश, जल का शीतलता और अग्नि का उष्णता है, उसी प्रकार आत्मा का स्वभाव सच्चिदानन्द, नित्यता और निर्मलता है।"